मेरी धरती मेरे लोग

शेषेन्द्र शर्मा

अनुक्रम

1.	शेषेन्द्र : व्यक्तित्व और कृतित्व दार्शनिक और विद्वान कवि और काव्य शास्त्रज्ञ	iv
2.	युग-चेतना का दहकता सूराज महा कवि शेषेन्द्र डॉ. केदारनाथ लाभ	v
3.	भूमिका : डॉ. विश्वंभरनाथ उपाध्याय	xvi
4.	दो शब्द अपनी ओर से : शेषेन्द्र	xxii
5.	मेरी आत्मकता - काव्य यात्रा प्रवेशिका : शेषेन्द्र	xxvi
6.	मेरि धरती - मेरे लोग	1
7.	युग-चेतना का निर्माता कवि : डॉ. विश्वंभरनाथ उपाध्याय	34
8.	दहकता सूरज	42
9.	गुरिल्ला से मुलाकात : धनंजय वर्मा	74
10.	गुरिला	79
11.	काव्य गंधार्व शेषेन्द्र : नरेश मेहता	102
12.	पानी हो बहगया	116
13.	प्रेम पत्र	134
14.	चीखता हुआ आद्मी	148
15.	समुंदर मेरा नाम	186
16.	शेष-ज्योत्स्ना *नीलम के पंख शिर्षक से उर्दू अनुवाद का देवनागरी लीप्यन्तरण*	203
16.	खेतों की पुकार	263
17.	मैं मेरा मयूर या मयूर मेरा मैं *देश काल से परे एक संवाद*	332

मेरी धरती मेरे लोग

मेरी धरती : मेरे लोग – दहकता सूरज

काफी बडे अन्तराल के बाद इतनी सशक्त कविताएँ पढने को मिली। अनुवाद में भी मूल का सा आनन्द मिला। देश की बदली हुई परिस्थिति में तो आपकी कविताएँ और भी अधिक सार्थक हो गई हैं । आपके द्वारा लिखी गई ये पंक्तियां तो वर्तमान युग का प्रतिनिधित्व करती हैं :-

''जो फसल इस साल उगी। अगर उससे
इसके दुख नहीं मिटे-तो अबके बरस
दरांतियां थामे हुये हाथ इन खेतों में उगेंगे।

अभी पिछले सप्ताह आपकी गंगा-जमुनी शैली में लिखी हुई "The arc of Blood" पुस्तक भी मिली। इतने स्पष्ट रूप से अपने अपने मन के विचार प्रकट कर दिये हैं कि यह कृति अब भारतीय साहित्य की अमर कृति बन गई है। स्थान-स्थान पर ''भाषा'' तथा ''शब्द'' पर व्तक्त आपके विचार भी उपयोगी हैं। आपका यह कथन सत्य ही है--

"It is a crime not to know what is happening in our ne&t-door Literatures,say in Marathi, Tamil, Kannada, Oriya, Bengali etc.,.. All of us must know each other. We cannot remain strangers to one another in our own country"

इन पुस्तकों के माध्यम से
विश्व
भारतीय आत्मा की धड़कन को महसूस कर सकेगा।

डॉ. कैलाशचन्द्र भाटिया, डी.लिट्,
वरिष्ठ साहित्यकार
लाल बहादूर शास्त्री, नेशनल अकाडमी आफ अड्मिनिस्ट्रेशन भारत सरकार
मसूरि - 248179
1976

जलता हुआ सूरज

मैं एक स्वेद-बिंदु हूँ—
मैं एक लोक-बंधु हूँ
जो मानव-मज्जा के पहाड़ों से
उदित होता है।
हृदयों से है मेरी दोस्ती
रहता हूँ मैं उस बस्ती में जो
दुःखों की बस्ती है।
हालाँकि मेरी मुट्ठी में
समुद्र भर इतिहास है
तो भी मैंने निर्माण किया
चुपचाप मनुष्य का।

पंख जो पक्षियों को लेकर उड़े
उन्हें लौटा कर नहीं लाये।
मैं घना अंधकार पी रहा हूँ
उन जंगलों में
जो वेदना से चीखते हैं
उन पक्षियों के लिए-
जो लौटे नहीं।
स्मृतियों का दामन थामे हुए
मैंने स्वयम् को
अपने देश के चरणों से लपेट दिया
सिर जो वृक्षों की डालियों से लटके थे
आज फूल बन कर मुसकुरा रहे हैं।

हृदय जिन्होंने गोलियाँ खायी थीं
आज मन्दिरों में घंटियाँ बन कर बज रहे हैं।
कितने लोगों ने
अपनी रातों का रक्त निचोड़ कर अर्पित किया

सूर्य का अपना गाँव

मेरे शब्दों के देशों में
जहाँ सूर्य कभी अस्त नहीं होता
वहाँ केवल दिन है
जिसमें स्वेद के मुकुट पहने हुए देवतागण
धूप-स्नान करते हैं
वहाँ नक्षत्रों के जंगल नहीं ... जहाँ
अंधकार शासन करता है।

मेरी आँखें जब मुँदती हैं
तो सोती हुई सेब होती हैं,
और जब खुलती हैं
तो बालियों पर हँसती हुई स्वर्ण-धान्य।
यहाँ तक कि मेरे खर्राटे भी
विश्व की नींद को भंग करते हैं
मेरे युद्धों के धुँएँ से उभरते हैं
मेरी कविताओं के चेहरे,
मेरी आवाज की गर्जना से डर कर
कविगण
जो समय की अलगनी पर लटक रहे हैं
कौओं की तरह उड़ जाएँगे।...
मैं जब चलता हूँ
तो मेरे कदम वज्राघात होते हैं
जो मेघों में छलाँग लगाते हैं
और मैं उठाऊँ
तो मेरा हाथ एक महान ज्वाला है
अगर मैं उसे नीचे कर लूँ -
तो वह एक संध्या है
जिसमें से असंख्य किरणें विकीर्णित होती हैं।
मेरा शरीर एक शाश्वत होम है
वह सूर्य का अपना गाँव है।
यह सूर्य
जो प्रत्येक दिन क्षितिज-रेखा पर चढ़ता है...
अगर मैं चाहूँ तो उसे अपनी ऊँगली में
एक छल्ले की तरह चढ़ा सकता हूँ।

यूकेलिप्टिस का जंगल

बाहर आकाश पुकार रहा है–
आओ! चलें!!
उन यूकेलिप्टिस के जंगलों में दौड़े
जो चर्चों के शिखरों की तरह उन्नत हैं,
जहाँ लाल कमेलिया
नि:शब्द माधुर्य में सो रहा है
चलो, उन आसव-धुत्त मेघों से मिलें
जो पहाड़ों के दिलों पर नशे में कूद रहे हैं।

स्वेद-बिन्दुओं को धान्य के मौतियों में
परिवर्तित करें
धरती के घावों को सहलाएँ
चलो, प्रेम-वर्षा करें।

ये मित्र तुम्हारे-मेरे मध्य क्यों हैं?
ये तुम्हारी मोतियों की माला की तरह
हमारे ओठों के बीच आते हैं
ये तथाकिथ मित्र
एक झूठ हैं-आज की हरेक वस्तु की तरह
जिससे काल सचाई का स्वर्ण चुरा कर
भाग गया है।

हम एक बार इन्हीं वृक्षों के नीचे मिले थे
जो दिल में संचित सूर्य की
प्रिय स्मृतियों की जुगाली करते हैं
रात की छाँह में।

पुष्प और खामोशी

यह मद्धिम अंधेरा –
यह मद्धिम रोशनी–
यह मद्धिमता एक दूसरे में मिश्रित हो कर
लम्बे वृक्षों को
और भी लंबा बना रही है
जो कि तनी हुई छायाओं की तरह खड़े हैं।
अपने बालों में नक्षत्रों को टाँके हुए
यह खामोशी
अँधेरे को और भी गहन बना रही है।

इस अद्‌वैत में
जहाँ अँधेरा निरभ्र शांति में एकाकार हो रहा है
वहीं जाग्रत होता है मेरा मस्तिष्क,
अब आवाज ही नहीं
एक छोटी–सी प्रकाश–रेख भी
इस गहरी शान्ति को भंग करती है।

ऐसे क्षणों में होता है गहन सचाइयों से
साक्षात्कार,
अभी और सिर्फ अभी मैंने अनुभव किया कि
राग, आवाज में नहीं, नीरवता में निवास करता है।

मैं जन्मा हूँ फूलों और खामोशियों से–
चलते हुए मेरा हाथ एक पुष्प से छू गया
मैंने पूछा–क्या तुम जख्मी हो गये?
किन्तु मुसकुरा कर उलटा पुष्प ने पूछा–मैं या तुम?
मेरी कलम का दिल टूटा और रक्त छिटका गया
मैं नहीं जानता ऐसा कोई कागज
जो इस कलम को सह सकेगा।

नीले आकशों को छूने वाली
अरण्यों की महान् शांतियों में
जो कठफुड़वा पक्षी वृक्षों की देहों पर
चोंच से प्रहार करके

पक्षी-विहीन उद्‌यान

वृक्ष के अन्तरालों में से
आकाश मुझे पुकार रहा है
घरों की छतों पर से
और पहाड़ियों की चोटियों पर चढ़ कर
बादलों की भीड़ में से
आकाश मुझे पुकार रहा है।

आकाश में
एक एकाकी नक्षत्र
उँगली से इंगित कर रहा है कि
ऋतु-युद्ध में कितने फूल धरती पर
गिर पड़े।
और कहता है मुझसे कि
इस पक्षी-विहीन उद्यान को
छोड़ दो
तुम्हारी आत्मा के
चूसने के लिए
मैं तुम्हें एक चंद्रमा देता हूँ...
आकाश मुझे पुकार रहा है।

गुरिल्ला से मुलाकात

– धनंजय वर्मा

साहित्यकार समीक्षक वरिष्ठ पत्रकार

कोई भी राजनीतिक घटना या प्रतिक्रिया कवि के रचना मानव में एक संवेदनात्मक हलचल मचा सकती है, उसका एक तात्कालिक असर भी हो सकता है, लेकिन जरूरी नहीं कि कविताएँ महज इसीलिए महत्त्वपूर्ण और प्रसांगिक हो जाएँ। कवि की तात्कालिक या राजनीतिक संलग्नता उसे फौरी शोहरत और तात्कालिक प्रतिष्ठा भी शायद दे सकती है, लेकिन कविता अख़बार की ख़बर नहीं है। वह अपने वक्त से आदमी की तकरार है, इसलिए जब भी आदमी अपने समय के आमने-सामने हुआ है, कविता उसके साथ एक मानवीय दलील और नज़ीर की मानिन्द खड़ी रही है। उसकी रचनात्मकता तात्कालीक राजनीतिक संलग्नता के बावजूद और पार होती है। जब तक सामयिक और वक्ती उत्तेजनाएँ कविता में मानवीय शक्ल-सूरत अख्तियार नहीं करतीं, अपने वक्त और तवारीखी हालात का मानवीय प्रत्यय नहीं रचतीं, तब तक वह अख़बार की सुर्ख़ी हो सकती हैं, कविता नहीं।

मौजूदा दौर का सबसे बड़ा हादसा यही है कि हमारे वक्त की बहुत सारी कविताएँ, अख़बार की सुर्ख़ी बनती जा रही हैं। तवारीख़ और तारीख़ के बदलने के साथ ही कवि और कविता की संलग्नताएँ भी बदलती जा रही हैं। समकालीन माहौल में इसीलिए तेलुगु के प्रसिद्ध कवि शेषेन्द्र शर्मा की गुरिल्ला एक ज़रूरी और मानवीय प्रतिवाद की कविता के रूप में अपने बुनियादी रचनात्मक चरित्र का सबूत पेश करती है।

नहीं, हम शाश्वततावाद के सौन्दर्यशास्त्र के कायल नहीं हैं। हम वक्त के तकाजों और जिम्मेदारियों को नजरन्दाज नहीं कर सकते। हम तो कविता और वक्तव्य में, रचना और घोषणापत्र में, कला और इश्तहार में, शब्द और नारे में फ़र्क़ करना चाहते हैं।

'गुरिल्ला' वक्तव्य और घोषणा पत्र नहीं है। आदमी के ख़िलाफ वक्त की साज़िशों और हरकतों से आदमी की जिरह और मुठभेड़ है। इसीलिए उसकी घोषणा और उसका वक्तव्य भी कविता की अनिवार्य मानवीय संलग्नता

काव्य-गन्धर्व : शेषेन्द्र शर्मा

– नरेश मेहता
कवि उपन्यासकार समालोचक
ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता

आधुनिक तेलुगु के शीर्षस्थ कवि श्री शेषेन्द्र शर्मा का नाम हिन्दी के सुधी-कवियों-लेखकों में तथा आधुनिक भारतीय काव्य-साहत्य में न केवल सुपरिचित ही है बल्कि प्रखर सर्जक का पर्याय जैसा है; साथ ही उनके प्रति आत्मीय सम्मान भी है। वह आत्मीयता उनके संस्पर्शी व्यक्तित्व के प्रति है तथा सम्मान उनके प्रातिभ कृतित्व के प्रति भी। वे उन कुछ विरल कवियों में हैं जो अपने मोहक तथा सौम्यवत व्यक्तित्व के कारण भी ध्यान आकर्षित करते हैं। जो कवि होने के साथ-साथ कवि की ग्रीक-प्रतिमा भी लगें, ऐसे रम्य व्यक्तित्व कम ही होते हैं। शेषेन्द्र उन्हीं अपवादों में से एक हैं, इसीलिए उनके लिए 'काव्य-गन्धर्व' संज्ञा प्रयुक्त हुई है।

सामान्यत: व्यक्तित्व अनेक प्रकार के होते हैं - सम्भ्रान्त, पाण्डित्यपूर्ण, सरल, भावुक, आत्ममुग्ध, आत्मश्लाघी, दम्भी, दर्पपूर्ण या और भी बहुत-कुछ। शेषन्द्र के व्यक्तित्व में एक प्रकार की सम्भ्रान्तपूर्ण काम्य इन्द्रधनुषता की ऐसी लय है जो उन्हें पारदर्शी भी बनाती है तथा असंग भी। कोई भी कलाकार प्रचलित अर्थ में न तो सरल ही होता है और न ही कुटिल। सरलता जहाँ सन्तों का लक्षण है वहाँ कुटिलता राजनीतिज्ञों का। उत्तरोत्तर सहज, मानवीय तथा उदात्त होते जाने का नाम कलाकार है। कलाकार का व्यक्तित्व विकास की प्रक्रिया होता है। पाण्डित्यपूर्ण वाणी, आसवी 'प्रसन्नं सलिलं' नेत्र, आत्मस्थ तन्मय भंगिमा के साथ दुरागत चले गए किसी राग की प्रतिगूँज का बोध, किसी के व्यक्तित्व को देखकर लगे तो आप उस स्थिति और व्यक्ति को क्या कहेंगे। इसीलिए कलाकार सरल लगते हैं पर होते नहीं हैं, क्योंकि उनका व्यक्तित्व निरन्तर प्रक्रियारत रहता है। ऐसे वाद्य-व्यक्तित्व के शेषेन्द्र को देखते हुए आप अनजाने ही उनके व्यक्तित्व का उल्लंघन कर जाते हैं और आप शेषेन्द्र को नहीं बल्कि जैसे श्री शेषेन्द्र शर्मा का राजस तैलचित्र देख रहे होते हैं। उनके व्यक्तित्व की त्वरा निश्चय ही सिंह राशि की है परन्तु नेत्रों से वह आहट लेते मृग लगते हैं। वे संकल्पनिष्ठ राजनीति तथा आर्ष-कविता की एक साथ झाँकी देते हैं। जो व्यक्ति, कवि और विचारक रूप में निरन्तर संलाप, सम्वाद, सम्प्रेषण और सृजनात्मकता की मानसिकता में रहता हो उसे आप व्यक्ति के रूप

पानी हो बह गया

शेषन्द्र शर्मा की अप्रतिरोध्य और प्रदोलित शैली, उनकी सूक्ष्म दृष्टि तथा तीखी आवाज आन्ध्र प्रान्त पर अपनी धाक जमा चुकी है। उनका स्वर आधुनिक समकालीन जागरूक कवि समुदाय में स्पंदन प्रेरित करनेवाला ही है। उनकी हर रचना नये संवेगों और नये विचारों को पाठकों में परिव्याप्त करनेवाली रही है। पानी हो बह गया (नीरै पारिपोयिंदि) उस दिशा में कुछ और नयेपन को साथ लेकर चलनेवाली रचना है। इस का निर्माणात्मक कौशल चकाचौंध करनेवाला है। इस के द्वारा वे भारतीय साहित्य में पूर्णत: नये दृष्टिकोण को प्रतिष्ठत करते हैं, जिसका आधार सृजनात्मक स्मरण शक्ति है।

'मेरी धरती मेरे लोग' भव्य महाकाव्य के तुरन्त बाद उभरी यह रचना शेषेन्द्र की प्रतिभा का एक और महत्वपूर्ण उदाहरण है। इस कृति से यह स्पष्ट निरूपित हो जाता है कि वे किसी भी विषय को सहज अतुल्य प्रतिभा से विभूषित कर सकते हैं।

आकाश सूर्य का देवालय है,
यह संसार का चराचर वस्तु ग्रंथालय है,
पेड फूल ले खडे भक्तों के समुदाय हैं,
मैं विचारों में डूबा जलाशय हूँ।।

★★★

आकाश गंगा उष: प्रवाहों में डूबी कि नहीं गुलमुहर ने प्रथम दर्शन देकर नयी ऋतु की घोषणा कर दी। तरह तरह की स्मृतियाँ दूर दूर से मेरे रक्त प्रवाहों में गिर कर प्रवाहित हो आयी हैं।

यह भाषा, यह समय, यह देश ङ्क सब मेरे हैं – यह कैसे कह सकता हूँ? ये मेरे चाहे नहीं हैं / मेरे जन्म लेने से पहले मुझ से पूछ कर किसी ने मेरी स्वीकृति नहीं ली है/ मैं उनका कैदी हूँ।

मैं कितनी जिह्वाओं, कितने युगों, कितने देशों को रौंदता आया हूँ। इसे आज 'यह मेरे गाँव का है' कहनेवाले इस छोटे से गाँव को मालूम नहीं/ मुझे भी पता नहीं है।

यह दिन तो बस बता रहा है / एक समय मेरा देश एक फूल है /उसमें एक मकरंद शिशु बन मैं ने साँस ली है।

एक एक समय पर बाहर व्यक्त होते हैं / मेरे रक्त । नदी तटों पर मेरे पुराने पत्थर के बने औजार / प्रवाहों में ढह कर बह आते हैं / प्राचीन सुमेरिया और मोहंजोदारो।

मैं किन जंहलों में फिरता रहा / सिंह । शार्दूलों के गर्भों में सोते हुए / मुझे किस सुंदर हिरण ने चरा है शाद्वलों में / अपने रक्त माँसों को सहराते हुए मैं ने किस वन की अनुभूति-प्राप्ति के लिए वृक्ष बन डालियाँ फैलाई हैं। अपने पत्तों कीअंगलियों से शून्य का स्पर्श करते हुए।

किस प्राचीन समुद्रीय चेतना में तिरा है। निरिन्द्रिय निरवयव कांति कण बन स्पंदित होता हुआ / किस घडी में झूला है। काल में झूलनेवाले खिलौनों के समान रहने वाले सूर्य और चन्द्रों में / और मुझ में अभेद अनुभव करता हुआ।

मेरी समस्त स्मृतियाँ रक्त-प्रवाहों मेंगिर कर प्रवाहित हो आ रही हैं। गुलमुहर द्वारा घोषणा की गयी नयी ऋतु के इस दिन पर! जो ऋतु सृष्टि के अनन्तत्व का गान करती है उस ऋतु को!

मेरे गाँव में मुझे पहचाननेवाले चार ही हैं। शिथिल पुल, गाँव की नहर, पुराना मंदिर और बूढी तटनी का तट!

प्रेम-पत्र

जीवन-पत्र

पत्र खोला, पृष्ठों से चाँदनी बिखर गयी, और वाक्य मैना, चकोर और तोते बन कर उड़ गए। फिर मैं और धवलिमा बच गए पृष्ठों पर।

आज मेरा हृदय एक नई मन:स्थिति का अतिथि बन गया। नक्षत्रों के गाँवों से चाँदनी के झुण्डों को हाँकता हुआ आ गया है चन्द्रमा। रात मेरी पीड़ाओं को लय के अनुरूप गुनगुनाने लगी। मैं जब चुपके से बगीचे में प्रविष्ट हुआ तो पाया कि मौसंबियाँ डालों पर लेट कर सो रही थीं, मासूम बच्चों की तरह, और मुझे लगा कि वृक्ष मेरे कान में फुसफुसा रहा था – ''अपनी छाया से ही टकरा कर तुम गिरे जा रहे हो! जो फूल नहर में गिरे वे क्या बहे बिना रहेंगे? अपने चेहरे को मानवीय उद्विग्नता का रूपकालंकार मत बनाओ! देवताओं जैसे तुम्हारे शब्द पुनीत करेंगे लोकों को।''

मैंने जीवन में डूब कर भरपूर क्रीड़ा की है। अनेक गहराइयों में गोते लगाए हैं। अनेक उँचाइयों पर चढ़ा हूँ। किसी एक जगह से नहीं बँधा। किसी भी स्थान पर नहीं पहुँचा। मैं वह साहसिक हूँ जिसने समुद्रों की यात्राएँ कीं। कई स्वप्नों को कविता-नौकाओं पर चढ़ा कर तुम्हारे तटों तक पहँचाया। इन हाथों, लोह-दंडों ने कई पवतों को उखाड़ दिया। द्वीपों और उपमहाद्वीपों को बाँद कर लाया। द्वीपकल्पों को कुत्तों की तरह तुम्हारे सामने ला कर घुमाया।

अब मैंने अपने हृदय को आकाश के मैदानों में फेंक कर, एक ध्वज की भाँति प्रतिष्ठित कर दिया। उधर देखो! कपड़ें की वह रंगीन चिंदी जो हवाओं में उड़ रही है, इस युग की जिह्वा है। आओ, केरल की वृक्षावलियों में नेत्रों के जुलूस लेकर दौड़ते मार्गों से। आओ, ब्रजभूमि को करील की झाड़ियों में से सिर उझका कर झाँकते नगरों से और पीठ के बल लेटे राजस्थान के रेगिस्तानों से। आओ, मध्यभारत के घने जंगलों से – लाखों के जुलूस लेकर आओ!

तुम लोग नहीं जानते, मैं हमेशा आगे रहता हूँ आदमी से। पकड़ लेता हूँ अपनी अदृश्य किरणों से आगे की वस्तुओं को। मेरे लिए ग्रहण राहु नहीं है, लेकिन असूया विष-बाहु। मेरे शत्रु मेरे समय में श्वास लेने वाले नहीं हैं- लेनिक मेरा

समुंदर मेरा नाम

समुद्र को तू कितना जानता है? समुद्र लहरों का समूह नहीं---- अरे ! दिशान्तों तक व्याप्त इस विशाल असहायतावलय में कौन-सा समुद्र है और कौन समुद्र के तट पर है, तू क्या जानता है?

तू मस्ती में इटलाती तैरती बढ़नेवाली नाव है, लहरियों के कंधों से ढ़ोई जानेवाली पालकी है । भयंकर संदर्भों से लड़ाइयाँ, जीवन-मरणों को तराजू में तोलकर रखनेवाली हारें, प्रिय वस्तुओं की प्राप्ति के लिए बिताये गये युगों से तुल्य क्षणों से भरे बीभत्स उत्सवों में तूने कब भाग लिया है? केवल एक ही घड़ी के लिए खिलकर रंगों की हवाओं को बहलानेवाले फूल की आत्मा को तूने कब प्रत्यक्ष कर लिया है?

समुद्र एक मार्मिक द्रव्य है। तू कब जाने समुद्र की गहराइयाँ? समुद्र की सिराओं में कितनी पर्वत श्रेणियाँ हैं और उसकी आँतड़ीयों में कितनी सभ्यताएँ जीर्ण हो गयी हैं तू क्या जानता है? समुद्र के रक्त-प्रवाहों में कितने युगों की, कितने मन्वंतरों की आग छिपी हुई है, तुझे कैसे मालूम होगा? कितनी वेदनाएँ और कितनी आत्माओं की साहस पूर्ण यात्राएँ उसके अन्तरों में घुर घुर ध्वनियाँ कर रही हैं तू कैसे जान सकता है?

कल समुद्र अश्व गति से दौड़ रहा था। हर तरंग एक प्रतीक और एक अंलकार था - आज वही समुद्र फूटकर टूट पड़नेवाले उत्तुंग तरंग, श्वेत निराश सदृश फेनिल समूह, तटों से टकराकर मूक हुए शंख, तितर-बितर सीप, हमेशा हमेशा के लिए पानी को खोयी भग्न नौकाएँ---समस्त मेरे कंठ-पृष्टों में समाहित---एक मानव अवयवों की शिथिल राजधानी !

मेरे कंठ में एक चिल्लाहट है; चिल्लाहट में एक प्रतिध्वनि है- मेरी चिल्लाहट में समुद्र, पर्वत, जंगल, गाँव सभी चिल्ला रहे हैं- अभिव्यक्ति के लिए, नाम के लिए; अपनी अस्मिता से भिन्न एक अनुभूति के लिए; फिर भी मेरे नाम में नाम पर अनासक्ति है;

मुझ में से काल प्रवाहित हो रहा है- अभिव्यक्ति की पराकाष्ठा की दिशा में, निश्शब्द की ओर सभी शब्दों को समेटकर जा रहा है।

समुद्र लहरों का समूह नहीं, समुद्र एक भाषा है ! समुंदर मेरा नाम है !

End of Preview.

Rest of the book can be read @
http://kinige.com/book/Meri+Dharti+Mere+Log

* * *